अध्याय–2

दास प्रथा : उत्पत्ति, प्राचीनता एवं ऐतिहासिक विकासक्रम

इतिहास के प्रारम्भ से ही दासता की अवधारणा मानव जीवन के मध्य व्यवहृत होती रही है। समस्त प्राचीन सभ्यताओं के सा0 एवं आ0 संरचना का यह एक सार्वभौमिक तत्व/विशेषता रही है। यथा–यूनान[1], रोम[2], मध्य–पूर्व[3], मिस्र[4], चीन[5], जापान[6], भारत[7] आदि। दासता एक अतिप्राचीन संस्था है जिसकी उत्पत्ति का कोई एक विशेष समय निर्धारित करना संभव नहीं है। विश्व के अन्य देशों के समान भारत में भी इसकी उत्पत्ति प्राचीनतम् युद्ध के कानून से जुड़ी हुई है।

दासता सन्दर्भित साक्ष्यों के अनुशीलन से प्रमाणित होता है कि यह अति प्राचीन काल से ही विश्व की कई देशों अथवा संस्कृतियों में विद्यमान रही है और आज भी कुछ देशों में यह प्रचलित है। जबकि संख्या की दृष्टि से आज जितने दास हैं (जिनकी अनुमानित संख्या 12 से 27 मिलियन है) उतने कभी भी इतिहास में नहीं रहे थे। यद्यपि अनुपातिक संख्या की दृष्टि से यह विश्व की जनसंख्या का अत्यन्त न्यून संख्या है।

जहाँ तक दास का तात्पर्य है, इस सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि 'दास दूसरे द्वारा अधिकृत और अधिकांशतः या पूर्णतः अधिकार एवं स्वतन्त्रता से रहित होता है। इस प्रकार नियमानुसार वह किसी अन्य व्यक्ति की निजी सम्पत्ति होता है। वह अपने स्वामी की इच्छा पर आश्रित या निर्भर रहता है, जो उसे किसी भी प्रकार के कार्य के लिए मजबूर कर सकता है और कम से कम सिद्धांतः उसे उसके जीवन से भी वंचित कर सकता है।[8]

लगभग 8000 बी0सी0 के निचले मिस्र (Egypt) के प्राक्–ऐतिहासिक कब्रों से पता चलता है कि लीबियन लोगों ने सैनों को दास कबीलों के रूप में व्यवह्व करते थे। चूंकि दासता सामाजिक स्तरीकरण की विशेषता है। अतः आखेट संग्राहक (Hunter gatherer) से जुड़े लोगों में इस व्यवस्था के अस्तित्व की कल्पना या साक्ष्य दुर्लभ है। व्यापक दासता के लिए आर्थिक अतिरेकता तथा उच्च जनसंख्या घनत्व की दशा भी अपेक्षित है। इन प्रवृत्तियों को देखते हुए यही माना जा सकता है कि दासता के प्रचलन की परिकल्पना कृषि के आविष्कार के बाद नवपाषाण काल के दौरान लगभग 11000 वर्ष पूर्व ही चरितार्थ हुई होगी।

यूनानी आदि कवि होमर (ई0पू0 900 के लगभग) के महाकाव्यों इलियड व ओडिसी में भी दासता के अस्तित्व तथा उसके नैतिक पतन का उल्लेख है। यूनान में दास बहुत बड़ी संख्या में थे तथा ऐसा माना जाता है कि एथेंस में दासों की संख्या स्वतन्त्र नागरिकों से भी अधिक थी। यूनानी समाज व राज्य में दासों की एक निश्चित व महत्वपूर्ण भूमिका थी। इसे प्लेटो तथा अरस्तू जैसे विचारकों ने दार्शनिक आधार प्रदान किया। इनके कृतियों के माध्यम से ही प्रमुखतः हमें यूनानी दासता की अवधारणा का बोध होता है। प्लेटो ने अपनी कृति 'रिपब्लिक' में दासों की चर्चा प्रमुखता से की है जिसके आधार पर कुछ आधुनिक इतिहासकारों जैसे–सैबाइन[9], डनिंग[10], वार्कर[11] ने अपनी कृतियों में अनेक महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रतिपादित किये हैं। जहाँ यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने दासता को स्वामी व दास दोनों के लिए हितकर माना है, वहीं प्लेटो ने इसका विरोध किया क्योंकि वे दासता को अनैतिक मानते थे।

अरस्तू ने अपने ग्रन्थ 'पालिटिक्स' दासता संदर्भित अनेक दृष्टांत दिये हैं। उनके अनुसार प्रकृति ने स्वभावतया शासक एवं दासवर्ग का सृजन किया है। जिसमें दासों को राज्य के विकास में अत्यन्त महत्वपूर्ण माना गया है। क्योंकि दास अपने स्वामी की सहायता करने उनके निमित्त खर्च होने वाले उस अवकाश को उपलब्ध कराता है जिसमें मालिक या शासक राज्य के हित के

लिए अपने को पूर्णतया समर्पित करता है। इसलिए दासों की राज्य निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

एक स्थापित संस्था के रूप में दासता का स्पष्ट उल्लेख 1760 ई0पू0 के हम्बूराबी की विधि संहिता में मिलता है। जहाँ उल्लेख मिलता है कि उस व्यक्ति को मृत्युदण्ड दिया जाएगा जिसने किसी दास को भगाने में मदद की हो। साथ ही साथ उसे भी यदि किसी ने किसी भगोड़े को संरक्षण दिया हो। इस तरह बाइबिल में भी दासता का उल्लेख एक सुस्थापित संस्था के रूप में हुआ है।

इन उपरोक्त दृष्टान्तों के अलावा दासता संदर्भित साक्ष्य विश्व की अन्य प्राचीन सभ्यताओं में भी दृष्टिगत होती है। जैसे–सुमेर सभ्यता, मिस्री सभ्यता, चीनी सभ्यता, अक्कादी साम्राज्य, प्राचीन भारत, प्राचीन यूनान (Greece), रोमन साम्राज्य, इस्लामिक खिलाफत Dominion of caliph successor प्राक्–कोलम्बिया सभ्यता (अमेरिका) आदि। जिसमें अमेरिकी दासता का इतिहास तो अपने संघर्षों के कारण विश्व प्रसिद्ध है जिसमें प्रमुख योगदान मार्टिन लूथर किंग तथा अब्राहम लिंकन का है।

जहाँ तक भारत में इसकी उत्पत्ति का प्रश्न है, तो इसे दो दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। प्रथम तो साहित्यिक साक्ष्यों में ऋग्वेद में सर्वप्रथम दास प्रथा की उत्पत्ति का प्रमाण मिलता है। जबकि दूसरा दृष्टिकोण पुरातात्विक साक्ष्यों पर आधारित है। तद्नुसार इसकी उद्भव गाथा सैंधव काल से मानी जा सकती है, क्योंकि इससे पूर्व प्रागैतिहासिक युग की अर्थव्यवस्था दास प्रथा के प्रादुर्भाव के लिए नितान्त अनुपयुक्त थी। इसी प्रकार प्राक्–हड़पाई संस्कृतियों के काल में भी इसकी उत्पत्ति की संभावना कदाचित् नहीं है। वस्तुतः विकसित अर्थ–व्यवस्था वाले एवं समृद्ध सैंधव सभ्यता के कुछ साक्ष्यों के आधार पर इतिहासकारों ने दास–प्रथा की प्राचीनता सैंधवकाल तक मानने की दलील पेश की है। यद्यपि लिखित साक्ष्यों के अभाव में इस सन्दर्भ में अन्तिम निष्कर्ष आज भी अनुमानपरक ही है।

इसकी ऐतिहासिक के सन्दर्भ में, ह्वीलर आदि विद्वानों ने मोहनजोदड़ो में अन्नागार के निकट प्राप्त हुए 17 बैरकनुमा भवनों की दो पंक्तियों तथा हड़पाई नगरों में कम से कम तीन सामाजिक वर्गों–शासक (पुरोहित या नागरिक), व्यापारी तथा कृषक के साथ–साथ चौथे वर्ग के रूप में सेवक/श्रमिक (दास) की परिकल्पना पेश की है।[12] देवराज चानना का मानना है कि उस काल के समाज में घरेलू दासों/सेवकों के अतिरिक्त कुछ दास वैतनिक श्रमिक भी

थे।[13] इन्होंने तो मोहनजोदड़ों से प्राप्त कांस्य निर्मित नर्तकी की मूर्ति को सैंधववासियों की नगर दासी माना है।[14] व्हीलर ने माना कि सिंधु सभ्यता के लोग मेसोपटामियों से दासों का व्यापार करते थे।[15]

वैदिककाल में दासप्रथा के स्पष्ट साक्ष्य प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद में आये दास, दस्युओं व दासियों को प्रायः अनार्य माना जाता है, जो आर्यों के विरोधी थे।[16] ए.एल. बाशम ने भी दास शब्द का प्रयोग आक्रमणकारियों द्वारा पराजित किये गये प्राग्वैदिक अनार्य भारतीयों के लिए किया है।[17] डी0डी0 कोसांबी के अनुसार आर्यों ने विजित दासों में से कुछ को ताबेदार (Servile) बना लिया था और तदुपरान्त दास का प्रयोग गुलाम के अर्थ में किया जाने लगा था।[18] देवराज चानना दास–दस्यु को पश्चिमोत्तर भारत में रहने वाली जनजातियाँ मानते हैं। जिन्हें आर्यों ने जीतकर दास बना लिया था।[19]

दासों में अधिकांशतः भारत की अनार्य जनजातियों के लोग थे। आर्यों और दासों की संस्कृतियां एवं धार्मिक विश्वास एक दूसरे के काफी भिन्न थे और दोनों में वैमनस्य भी था। ऋग्वेद में धार्मिक भावना से रहित व्यक्ति को दास माना गया है, भले ही वह आर्य रहा हो। उदाहणार्थ यदु और तुर्वश निःसंदेह आर्य जनजातियों के लोग थे, परन्तु वैदिक धर्म के प्रति अश्रद्धा रखने

के कारण उन्हें दास कहा गया है।[20] भाषाशास्त्र की दृष्टि से दासों के कुछ प्रमुख नेता शंबर, तुग्र, चुमुरि और अर्बुद अनार्य नहीं प्रतीत होते।[21]

ऋग्वेद में दास–दस्युओं तथा दासियों को अब्रह्मन[22], अदेवयुः[23], अयज्वन[24], अपव्रत[25], अन्यव्रत[26], मृधवाच[27], अनासा[28], आदि विशेषणों से युक्त बताया गया है।

ऋग्वेद में ऋण की अदायगी न करने वाले[29], जुए में हारे[30], तथा युद्ध में पराजित[31], बने दासों के उल्लेख है। इनमें सर्वप्रमुख कारण युद्ध था।[32]

वैदिक ग्रन्थों के कई उल्लेख दासियों की बड़ी संख्या में होना प्रमाणित करते हैं। उदाहरणार्थ, पुरुकुत्स के पुत्र त्रसदस्यु ने एक ऋषि को 50 दासियाँ उपहार में दी थी।[33] अश्वमेध[34] यज्ञ तथा राज्याभिषेक[35] के अवसर पर क्रमशः 400 एवं 10,000 दासियाँ दान देने का उल्लेख मिलता है।[36]

कुल मिलाकर वैदिक काल में दास–दासियों की स्थिति दयनीय नहीं थी और न ही उनके साथ कोई विशेष अयोग्यताएँ जुड़ी थीं। ऋग्वेद में कई मंत्रों के रचयिता कक्षिवान तथा कवष ऐलूष यद्यपि दासीपुत्र थे, तथापि उन्हें सम्मानित स्थान प्राप्त था[37] और सम्पत्ति के बल पर दास आर्य भी बन सकता था।[38]

उत्तर वैदिक कालीन साक्ष्यों–अथर्ववेद, शतपथ ब्राह्मण, तैतरीय संहिता, छान्दोग्य उपनिषद्, वृहदारण्यक, उपनिषद आदि में दास–दासियों से संदर्भित अनेक तथ्य उद्घाटित किये गये हैं। इसी प्रकार प्राचीन महाकाव्य रामायण[39] एवं महाभारत में भी इनके बारे में पर्याप्त जानकारी मिलती है।

वेदोत्तरकाल या बौद्धकाल (6ठीं शताब्दी ईसा पूर्व) द्वितीय नगरीकरण के फलस्वरूप उत्तर भारत में बड़े–बड़े क्षेत्रीय राज्यों तथा अनेक नगरों का उदय हुआ, कृषि, उद्योगों एवं व्यापार वाणिज्य की प्रगति हुई। इसी काल में लोहे तथा मुद्रा के प्रचलन से नगरीकरण को बढ़वा मिला तथा वर्ण व्यवस्था की कठोरता में कमी आयी जिसके फलस्वरूप दास–दासियों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई। शासक, ब्राह्मण, श्रेष्ठि आदि विभिन्न कार्यों के लिए दास–दासियाँ रखते थे। यहाँ तक की वैशाली की नगर वधू आम्रपाली जैसी गणिकाएँ भी भारी संख्या में दास–दासियाँ रखते थे।[40] विनयपिटक[41], दीर्घनिकाय[42], जातक कथाएँ[43] आदि में दास–दासियों से संदर्भित अनेक वृत्तांत वर्णित है। विधुर पंडित जातक और अन्य बौद्ध–गन्थों में निम्न प्रकार के दासों व दासियों का उल्लेख मिलता है।[44]

1. ध्वजाहृत (युद्ध में जीता गया)

2. उदर दास (भेट भरने के लिए)

3. आमाय दास (भरण–पोषण हेतु)

4. भय के कारण बना दास

5. स्वैच्छिक दास

6. धन से खरीदा गया दास

7. कम्मंतदास (खेत एवं कर्मशाला में काम करने वाला)

8. पादमूलिक–राजा और राजकुमार का विश्वास पात्र दास

जातकों में अनेक प्रकार की दासियां भी उल्लिखित हैं[45] :–

1. कुंभदास/वण्णदासी (मालिक के लिए घड़े में पानी भरकर लाने वाली)

2. वीहिको कोट्टिक (धान कूटने/साफ करने वाली)

3. करमर–अनीता (जिसे मृत्यु का भय दिखाकर दासी बनाया जाए)

4. पेसनदारिका (विवाह के समय दहेज में दी गयी दासी)

अधिकांश दास शूद्र जाति के ही होते थे। जिसकी पुष्टि बौद्ध साहित्य में आये 'सुद्दो वा सुद्दासों वा वाक्यांश से होती है।[46]

मौर्यकाल में यद्यपि मेगस्थनीज ने दास प्रथा के अस्तित्व को नकारा है, किन्तु यह सत्य नहीं है। क्योंकि अन्य साक्ष्यों स्ट्रैबो, आनेसिक्रिट्स, कौटिल्यीय अर्थशास्त्र तथा अशोक के अभिलेख से यह स्पष्ट होता है कि इस समय दास विभाग सूत्राध्यक्ष के अधीन होता था। भारत में दासप्रथा पर सर्वप्रथम 'दास

कल्प' नाम से एक अलग अध्याय कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में लिखा है। दासों के नाम, पते तथा संख्या आदि का विवरण गोप नामक अधिकारी रखता था।[47] कौटिल्य[48] ने 9 प्रकार के दासों का उल्लेख किया है–

1. ध्वाजाहृत–युद्धबंदी
2. उदरदास– भरण–पोषण या पेट भरने हेतु
3. दंड प्रणीत– शारीरिक श्रम द्वारा सजा काटने के लिए बना दास
4. गृहजात– मासिक द्वारा दासी से उत्पन्न
5. दायगत– उत्तराधिकार में प्राप्त
6. लब्ध–भेंट में प्राप्त
7. क्रीत– खरीदा गया
8. आत्मविक्रयी– स्वयं अपने को बेंचने वाला
9. आहितक– बंधक रखा गया

मौर्योत्तर कालीन स्मृतिकालीन अनेक साक्ष्यों से दास–दासियों के बारे में कथानक मिलते हैं। मनु[49] ने 7 प्रकार के दासों का उल्लेख किया है।

1. ध्वजाहृत– युद्ध में जीता गया
2. भक्तदास– भोजन के लिए बना दास
3. गृहज– दासी क पुत्र

4. क्रीत– खरीदा गया

5. दुत्रिम– दान में प्राप्त

6. दण्ड के कारण बना दास

7. ऋण न अदा कर पाने के कारण दास

उल्लेखनीय है कि धर्मशास्त्रकारों ने आर्य तथा अनार्य दासों में कोई भेद नहीं किया है, जबकि कौटिल्य ने दोनों में भेद किया है।[50]

गुप्तकाल में दास तथा पूर्ववर्ती कालों की अपेक्षा कुछ दुर्बल हो गई। तत्युगीन स्मृतिकारों ने लोगों को बलात् दास बनाने का विरोध किया है।[51] इस समय अर्थव्यवस्था में कृषि योग्य जमीन बनाने से और आंशिक रूप से सामंतवाद के प्रतिष्ठित हो जाने से श्रमिकों की मांग बहुत बढ़ गई जिसके फलस्वरूप बहुत से दास कृषि मजदूरों या श्रमिकों के रूप में बदल गये। तत्कालीन स्मृतिकार नारद[52] ने 15 प्रकार के दासों का उल्लेख किया है–

1. स्वामी के घर जन्म लेने वाला

2. धन से खरीदा हुआ

3. वंश परम्परा से प्राप्त

4. दुर्भिक्ष के दौरान बना दास

5. दान में प्राप्त

6. स्वामी द्वारा बंधक रखा गया

7. ऋण के कारण बना दास

8. युद्ध में बंदी बना दास

9. स्वयं दासता स्वीकार करने वाला

10. जुए में हारने के कारण बना दास

11. संन्यास आश्रम के नियमों को तोड़ने के कारण बना दास

12. एक निश्चित कालावधि के लिए दासता स्वीकार करने वाला

13. जीवन–निर्वाह के लिए दासता स्वीकार करने वाला

14. दासी से संभोग करने के कारण बना दास

15. आत्मविक्रयी दास

नारद ने घरेलू दासों को दो भागों में बाँटा है–(1) अच्छे कार्य करने वाले और (2) अपवित्र कार्य करने वाले। इसी प्रकार कात्यायन, द्वितोपदेश, पुराण मृच्छकटिकम् आदि में भी दासता संबंधित साक्ष्य मिलते है।[53]

गुप्तोत्तरकाल या पूर्वमध्यकाल (600 से 1200 ई0) के साक्ष्यों– स्कन्दपुराण, इत्सिंग, मेधातिथि, विज्ञानेश्वर, देवण्णभट्ट, अपरार्क, हेमचन्द्र, कल्हण, हरिश्चन्द्र, क्षेमेन्द्र आदि से तत्युगीन दास प्रथा पर प्रकाश पड़ता है। विवेचित काल में विज्ञानेश्वर ने मिताक्षरा में 15 प्रकार के दासों का उल्लेख किया है। विवेचित काल में दास–दासियों की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई

जिसका प्रमुख कारण था–सामंतवाद की चरमावस्था, युद्ध में बने दास तथा मुस्लिम आक्रमण (महमूद गजनवी, मु0 गोरी, बख्तियार खिलजी आदि)[54]। इस समय स्वतंत्र शासक, सामंत, श्रेष्ठि तथा गणिकाएं[55] भी दास–दासियाँ रखते थे। भूमिदानों की बढ़ती हुई संख्या के कारण इस समय कृषि दासों की संख्य पर्याप्त बढ़ गई। यही नहीं भारत से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर दासों का व्यापार भी किया जा रहा था जिससे दासों की संख्या में अभिवृद्धि हो रही थी। यह स्थिति कात्यायन के बाद बहुत अधिक दिखाई पड़ती है क्योंकि सइमराइच्चकहा, कथासरितसागर, उपमितिभव प्रपंचकथा, लेखपद्धति, गणितसारसंग्रहण आदि अनेक ग्रन्थों में दासों के व्यापार के प्रमाण उपलब्ध होते हैं।[56]

कुल मिलाकर पूर्वमध्यकाल में दास–दासियों की स्थिति में गिरावट आयी। दासीपुत्र अब अधिक निन्दासूचक हेा गया।[57] बाणभट्ट के अनुसार नाम के अन्त में दास शब्द आना ही मनुष्य के सामाजिक स्तर को अत्यन्त हीन बना देता है, उचित ही प्रतीत होता है।[58]

सन्दर्भ ग्रन्थ एवं पाद टिप्पणियाँ

1. इनसाक्लोपीडिया, ब्रिटेनिका, पृ0 217
2. वही
3. इनसाइक्लोपीडिया आफ सोशल साइंस, भाग, XIV , पृष्ठ 75–77
4. वही
5. वही
6. वही
7. वही
8. फिनले, एम.आई., स्लेवरी इन क्लासिकल एन्टीक्यूटी, 1961
9. सैबाइन, जार्ज0,एच., ए हिस्ट्री आफ पोलिटिकल थ्योरी, चतुर्थ संस्करण (पुनर्मुद्रित), आक्सफोर्ड प्रेस, दिल्ली, 1973
10. डनिंग, डब्ल्यू0ए0, ए हिस्ट्री आफ पोलिटिकल थ्योरीज, एन्शियण्ट एण्ड मेडिवल, चौदहवां संस्करण, न्यूयार्क, 1962
11. वार्कर, सर अर्नेस्ट, द पोलिटिकल थाट आफ प्लेटो एण्ड अरिस्टाटिल, न्यूयार्क, 1959 तथा ग्रीक पोलिटिकल थ्योरी, भाग 1 का हिन्दी अनुवाद, अनुवादक–विश्व प्रकाश गुप्त, दिल्ली, 1988 (पुनर्मुद्रित)
12. मार्टिमर व्हीलर, इंडस सिविलाइजेशन, पृ0 94 एवं मार्शल जॉन, मोहनजोदड़ो एण्ड इंडस सिविलाइजेशन, 1, पृ0 92

13. चानना देवराज, प्राचीन भारत में दास प्रथा, पृ0 22–23

14. वही, पृ0 30

15. मार्टिमर व्हीलर, इंडस सिविलाइजेशन, पृ0 94

16. मजुमदार और पुसलकर (सं0) वैदिक एज़, पृ0 253–54; उपाध्याय बलदेव, वैदिक साहित्य और संस्कृति, पृ0 552 तथा आगे

17. बाशम, ए0एल0, द वंडर दैट वाज इण्डिया, पृ0 152

18. कोसांबी, डी0डी0, पूर्वोद्धृत, पृ0 97

19. चानना देवराज, पूर्वोद्धृत, पृ0 25

20. ऋग्वेद, 10/62/10

21. उपाध्याय बलदेव, वैदिक साहित्य और संस्कृति, पृ0 505

22. ऋग्वेद, 4/16/9

23. वही, 10/70/11

24. वही

25. वही, 1/51/8; 6/14/3; 9/41/2

26 वही, 8/70/11

27. वही, 7/6/6

28. वही, 5/29/10

29. वही, 10/34/4

30. वही,

31. वही, 5/34, 6/22/10

32. शर्मा आर0एस0, शूद्रास इन एनशियन्ट इंडिया, पृ0 23

33. ऋग्वेद, 8/19/26

34. ऐतरेय ब्राह्मण, 8/12, 39/81

35. वही, 39/8

36. छान्दोग्य उपनिषद, 4/1/4/2–3

37. ऋग्वेद, 10/34; पी0एल0 भार्गव, इंडिया इन दि वैदिक एज, पृ0 240; वैदिक इंडेक्स, 1, पृ0 143

38. ऋग्वेद, 6/22/10

39. वाल्मीकि रामायण, तिलक टीका खण्ड 1–2, बम्बई 1888, तीना टीकाओं सहित खण्ड 1–7, गुजराती प्रेस बम्बई 1920 (सं.) जी0 गौरेश्यों, पेरिस 1843

40. जातक 2, पृ0 428; 3, पृ0 101 एवं 162–63; 5, पृ0 105; 6, पृ0 117, सुत्तनिपात, 5, पृ0 472

41. विनयपिटक, (सं0) एच0 ओल्डन वर्ग, खण्ड 1–4, लंदन, 1880–02, (अंग्रेजी अनुवाद कुमारी आई0वी0 हार्नर, खण्ड 1–4

42. दीर्घनिकाय, (सं0) टी0डब्ल्यू राइज डैविड्स एवं जे0 कार्पेन्तिए, खण्ड 1–2, लंदन 1889–1911 (अंग्रेजी अनुवाद टी0 डब्लू राइज डैविड्स, खण्ड 1–3)

43. जातक कथाएँ, जातक कथाएँ जे0वी0ओ0एस0 खण्ड 9, पटना

44. जातक, 3, पृ0 147; 4, पृ0 219, पृ0 285, मेहता, प्रीबुद्धिस्ट इंडिया, पृ0 208
45. प्रीबुद्धिस्ट इंडिया, पृ0 208–209
46. दीर्घनिकाय, 1, 104
47. कौटिल्य, अर्थशास्त्र
48. अर्थशास्त्र, 3/13
49. मनुस्मृति, 8/415
50. अर्थशास्त्र, 3/13
51. याज्ञवल्क्य स्मृति, 2/182, नारद, 5/38, तुलनीय, शांतिपर्व, 12/67/15
52. नारद, 5/26–28
53. काणे, पी0वी0, धर्मशास्त्र का इतिहास, प्रथम भाग, लखनऊ, 1900, पृ0 174
54. यादव, पूर्वोक्त, पृ0 47
55. स्कन्दपुराण, 20/29–35
56. विंक, आन्द्रे, अल–हिन्द द मेकिंग आफ द इण्डो इस्लामिक वर्ल्ड, जिल्द 1, अर्ली मेडिवल इंडिया एण्ड द एक्सपैंशन आफ इस्लाम, सेविबन्ध टू इलेविन्थ सेन्चुरी, आक्सफोर्ड प्रेस, 1990, पृ0 1–24
57. समयमातृका, 8/18, कर्पूरमंजरी, पृ0 22, 31, 156
58. हर्षचरित, 8, पृ0 400